PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 5, ISSUE 2

# अधिवास की उत्पत्ति एवं विकास की सामान्य प्रक्रिय

**डॉ0 आर0 के0 कटियार**
**विभागाध्यक्ष भूगोल**
**सी0 एस0 जे0 एम0 विश्वविद्यालय**
**कानपुर। उत्तर प्रदेश भारत**

**ललित कुमार**
**शोधकर्ता**
**सी0 एस0 जे0 एम0 विश्वविद्यालय**
**कानपुर। उत्तर प्रदेश भारत**

## प्रस्तावना :–

अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी पर्वतीय भाग में मानव के प्रवेश के साथ ही उनके इतिहास, परम्परा एवं आकांक्षा अनुरुप सांस्कृतिक भूदृश्यों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। मानव किसी समय विशेष में भूमि का उपयोग अपने सॉस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रत्यक्षीकरण के अनुसार करता रहा है जिससे समय–समय पर परिवर्तित भृदश्यों का निर्माण सम्भव हो सका है। मानव विकास का प्रारम्भ भारत के उत्तरी मैदान में प्रागैतिहासिक काल से माना जाता है। आई0आर0 नकवी के अनुसार 15000 ईसा पूर्व भी मानव इस क्षेत्र में खानाबदोश जीवन व्यतीत करता था। रामलोचन सिंह के अनुसार ग्रामीण अधिवास एवं ग्रामीण व्यवस्था का प्रारम्भ यहॉ प्राचीन काल से ही हो गया था।

कुमायूँ हिमालय में मानव अधिवास की वर्तमान भूदृश्य को सारणी क्रमांक 7.1 में समझा जा सकता है। कुमायूँ हिमालय क्षेत्र के सभी जनपदों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट ज्ञात होता है अल्मोड़ा जनपद में प्रति 100 वर्ग किलोमीटर पर 70.45 अधिवास है जो कि सर्वाधिक तथा मण्डल के औसत से 2.10 गुना अधिक है। सबसे कम अधिवास वितरण पिथौरागढ़ जनपद में 22.24 प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है जो औसत से कम है तत्पश्चात ऊधमसिंह नगर में अधिवास वितरण 23.18 प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है।

**भाब्दकुँजी** :– कालान्तर, स्वावलम्बी, चतुर्दिक, उच्चावच, भौगर्भिक।

**परिचय** :–

मानव अधिवास का प्रारम्भ प्रागैतिहासिक काल से माना जाता है। गंगा यमुना के मैदान में सर्वप्रथम अधिवास का प्रारम्भ हुआ। ग्राम अधिवास अत्यधिक संगठित एवं

स्वावलम्बी इकाई थी। गुप्त शासनकाल में अधिवासों को राज्य, प्रदेश और जनपदों में विभाजित किया गया था। अधिवास विकास की प्रक्रिया में प्रारम्भिक अधिवास के चतुर्दिक प्रसरण प्रारम्भ होता है। प्रसार प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं के अध्ययन में गाउमैन और ई0एच0हेमण्ड तथा हरवर्टशन का प्रयास महत्वपूर्ण है।

इस क्रम में जंगलों का विस्तृत रुप में सफाया प्रारम्भ हुआ और मौलिक अधिवास के चतुर्दिक अनेक कृषि उत्पादक क्षेत्र स्थापित हो गये और कालान्तर में मौलिक अधिवास सेवाकेन्द्र के रुप में विकसित हो गये तत्पश्चात् मौलिक अधिवास से निकटवर्ती क्षेत्रों की व्यवस्था समुचित रुप से न हो जाने पर दूरवर्ती क्षेत्र में नया अधिवास विकसित हुआ और धीरे–धीरे उस अधिवास ने भी केन्द्री स्वरुप धारण किया और सेवाकेन्द्र के रुप में विकसित हुये। अधिवासों के विकास में नदियों एवं अन्य जलीय साधनों युक्त सुरक्षित स्थल अधिक महत्वपूर्ण रहे है। ग्रामीण अधिवासों के वितरण एवं व्यवस्था का निर्धारण उस क्षेत्र के प्राकृतिक एवं सास्कृतिक परिवेश के जटिल प्रभावों द्वारा होता है। प्राकृतिक वातावरण के तत्व यथा प्रादेशिक स्थिति, उच्चावच भौगर्भिक रचना, अपवाह, जलवायु, मिट्टियाँ आदि अधिक महत्वपूर्ण है जिनके उपयुक्त होने पर ही ग्रामीण अधिवास विकसित होते है। सांस्कृतिक तत्वों में मार्ग एवं पविहन के साधन, भूमि उपयोग, बाजारों एवं सेवाकेन्द्रों आदि की उपस्थिति एवं कृषक समाज की सामूहिक प्रवृत्तियाँ तथा तकनीकी ज्ञान का विकास आदि मुख्य है।

गृह अधिवास अध्ययन का केन्द्रीय तत्व होता है वस्तुतः भौगोलिक शब्दावली में अधिवास का अर्थ बसे हुए क्षेत्र से है जिसके अन्तर्गत गांवों के सहारे आये मलबा को शीध्र ही बहा ले जाती है। मंद ढाल उन भागों में पायु जाते है। जहॉ पर सरिता ढाल के पद से दूर होती है तथा मलबा को बहा ले जाने में समर्थ नही होती हैं। यहॉ पर मलवा का संग्रह ढाल का संरक्षण प्रदान करता है। स्ट्रालर ने ढाल विकास से सम्बन्धित प्रक्रमों के कार्य से होता है। जिसके द्वारा निश्चित अवधि में ढाल के रुप में परिवर्तन होता है। अतः यंग ने भी ढाल विकास में प्रक्रम को ही अधिक महत्व दिया है।

ग्रामीण अधिवासों के विकास में नदियॉ एवं अन्य जलीय साधन युक्त सुरक्षित स्थल अधिक महत्वपूर्ण रहे जिन पर समयानुसार राजनीतिक दशाओं का भी स्पष्ट प्रभाव पड़ा है। वनाच्छादित भागों में अधिवासों के विकास में समय–समय पर होने वाले आक्रमण उत्तरदायी है। आक्रमण से त्रस्त जनता सुरक्षा हेतु वन वनों में जाकर बसी तथा इनको काटकर कृषि कार्य प्रारम्भ किया।

गॉवों के आकार पर अध्ययन प्राचीन काल से ही भूगोलवेत्ताओं की मुख्य विषय वस्तु रही है। भारत में रामायण, महाभारत, जातक पुराणों आदि में गांवों की आकृतियों को आयताकार, वर्गाकार, वृत्तकार, अर्द्धवृत्ताकार, दीर्घ वृत्ताकार आदि वर्गो में विभाजित किया है। जर्मनी क प्रसिद्ध विद्यान मत्जिेन (1885) ने अधिवास भूगोल गांवों की आकृति के विश्लेषण के वैज्ञानिक प्रयास की शुरुआत हुई। उन्होनें जर्मन के ग्रामीण अधिवासों को उनकी आकृति और प्रतिरुप के आधार पर कई का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया। पुनः ने में पेंक के विचारों की समीक्षा प्रस्तुत की। किंग (1857), ए0 ऊड (1942), टी0जे0फेयर (1949, 1948) पेंक व हार्टन (1945) पर्यवेक्षणों एवं व्याख्या पर आधारित है। आर0ए0 सेविजियर (1952) में ढाल विकास संकल्पना का प्रतिपदान किया है।

**सारणी क्रमांक 6.1**

**कुमायूँ हिमालय : ढाल का वितरण**

| क्र0सं0 | ढाल सूची डिग्री में | चिन्ह | बारम्बारता | क्षेत्रफल वर्ग कि0मी0 में | क्षेत्रफल % में | संचयी % में |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | $5^0$ से कम | Sl | 41 | 839.68 | 15.35 | 15.35 |
| 2 | $5^0$ से $10^0$ | Sg | 12 | 245.75 | 4.49 | 19.84 |
| 3 | $10^0$ से $15^0$ | Sm | 19 | 389.12 | 7.11 | 25.95 |
| 4 | $15^0$ से $20^0$ | Sms | 78 | 1597.44 | 29.22 | 56.17 |
| 5 | $20^0$ से अधिक | St | 117 | 2396.16 | 43.83 | 100.00 |
| **योग** | | | **267** | **5468.16** | **100.00** | |

a = 16.58 m = 18.97 z = 23.75

ए0 एन0 स्ट्रालर ने क्षेत्र में ढालों के अधिकतम कोण के मापन द्वारा ढाल के विकास से सम्बन्धित कई तथ्यों का प्रतिपादन किया। आगे भी स्ट्रालर ने अवलोकन किया कि उन्ही स्थानों पर ढाल तीव्र होते हैं जहॉ पर सरिता ढाल के पास ही होता है। ऐसी स्थिति में सरिता ढाल वर्गो में विभाजित किया। इसी प्रकार के प्रयास विश्व के विभिन्न

भागों में डिमॉनिया (1933) हाल (1931) और सिंह (1995) द्वारा किये गये। गांव के वास क्षेत्र की तुलना मुख्यतः ज्यामिति की विभिन्न आकृतियों से की जाती है। इनका विवरण निम्नवत् है –

**अ. आयताकार या वर्गाकार प्रतिरुप –**

इस प्रकार का प्रतिरुप उत्तरी भारत के मैदानों के अधिकाश गांवों में पाया जाता हैं। गंगा के मैदान में प्रत्येक मकान भी सामान्यतः आयताकार या वर्गाकार रुप में पाया जाता है। प्रत्येक गांव का अस्तित्व इसी रुप में विकसित हुआ होगा जिसमें समयानुसार भौतिक एवं सांस्कृतिक कारकों की प्रबलता के कारण परिवर्तन होता गया। गांवों में आयताकार भवन दो या अधिक पंक्तियों में व्यवस्थित पाये जाते हैं जिनमें सड़क एवं गलियॉ एक दूसरे के समानान्तर पायी जाती है। कुमायूँ हिमालयीय क्षेत्र में इस प्रकार के अधिवास नहीं पाये जाते है। कुमार्यू हिमालयीय क्षेत्र में इस प्रकार के अधिवास नहीं पाये जाते है क्योंकि पहाड़ी ढालों पर ऐसा सम्भव नहीं हैं।

**ब. खोखला आयताकार या वर्गाकार प्रतिरुप –**

इस प्रकार के प्रतिरुप का निर्माण तब होता है जब आवासों का निर्माण किसी टीले, झील, मन्दिर, मस्जिद, गिरिजाघ, पुराने दुर्ग अथवा वीरान बस्ती के चतुर्दिक किया जाता है। कभी–कभी अन्धविश्वास के कारण भी किसी पुराने वास क्षेत्र को परिपक्व कर दिया जाता है। राजपूत काल में 'भर' और 'मियों' जनजातियों को भगाकर उनकी बस्तियों के चारों ओर ऐसे अनेक गांवों की स्थापना की गयी थी हो तथा उनके कोण में कमी आये क्योंकि कुछ ढाल समानान्तर निवर्तन के कारण अपने कोण को या तो सुरक्षित रखते है या उसे और अधिक कर लेते है। गतिक सन्तुलन सिद्धान्त के समर्थकों के अनुसार ढाल परिवर्तन में समय का योगदान महत्वपूर्ण नहीं होता है। परन्तु उसके विकास में प्रक्रम का अधिक हाथ होता है।

**स. वृत्ताकार प्रतिरुप –**

यह प्रतिरुप प्रायः पुराने गांवों में देखा जाता है। जिसमें ग्रामवासियों के आवास, मुखिया, जमीदार या स्थानीय भू–स्वामी के गढ़ी के चतुर्दिक बने होते है तथा वे चारो ओर से दीवार या खाई द्वारा संरक्षित होते हैं।

**द. अर्द्ध–वृत्ताकार प्रतिरुप –**

इस प्रकार के विशिष्ट प्रतिरुप वाले गांवों का बसाव नदी, विसर्प, नदी मोड, वृत्तकार तालाब या देवालय आदि के सहारे पाया जाता है। कभी–कभी इसमें एक या दो दिशा में विद्यमान प्राकृतिक बाधाओं, दलदल, उत्खात भूमि आदि के कारण भी जनसंख्या का विकास वाधित हो जाता है। जिससे इस प्रकार के नवचन्द्रीय प्रतिरुप के विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

**य. त्रिभुजाकार प्रतिरुप –**

यदा–कदा विशिष्ट दशाओं जैसे स्थानीय बाधाओं आदि के कारण गांव के बास क्षेत्र की आकृति त्रिभुजाकार बन जाती है।

**र. रेखीय प्रतिरुप –**

इस प्रकार के प्रतिरुप का विकास किसी सड़क, नदी, तटबन्ध आदि के सहारे पाया जाता है। इसमें एक तरफ रेखाभिमुख बल के कारण आवासों का निर्माण रेखीय रुप में होता है वहीं दूसरी तरफ स्थलीय प्रतिबन्ध (बाढ़, दलदल आदि) के कारण आयताकार प्रतिरुप के विकास में रुकावट आ जाती है।

**6.4 ढाल का क्षेत्रीय वितरण प्रतिरुप –**

अध्ययन क्षेत्र में ढाल विकास किसी विशेष कारक के प्रभावित न होकर कई कारकों से प्रभावित होते है। जिनमें प्रमुख शैल प्रकार, संरचना, अपक्षय के विभिन्न रुप, नति कोण, ढाल के नीचले भाग में सरिता, अपरदन की दर, वानस्पतिक आवरण तथा भूगतियॉ आदिं इनमें से कोई एक उपक्रम अन्य की अपेक्षा अधिक सक्रिय हो सकता है परन्तु ढाल का एक मात्र नियन्त्रक नही हो सकता है।

**ल. एल (L) एवं टी (T) आकार प्रतिरुप –**

L आकार के प्रतिरुप का विकास तब होता है जब आवासों के दो आयताकार खण्ड एक दूसरे के समकोण पर मिलते है। कभी–कभी वास क्षेत्र में क्षैतिजिक प्रसार के कारण (L) आकार (T) में परिणत हो जाता है। इस प्रकार के प्रतिरुप का विकास नदी तट, सड़क, पगहण्डी आदि के सहारे होता है। कुमायूँ हिमालय में नदी तटवर्ती भागों में इस प्रकार के अधिवास पाये जाते हैं।

**व. शतरंजी प्रतिरुप –**

इस प्रकार का प्रतिरुप बड़े गांवो में देखा जाता है। जहॉ दो या कई सड़के वास क्षेत्र के मध्यवर्ती भाग में समकोण रुप में प्रतिच्छेदन करती है। केन्द्रीय भाग सेही अन्य सड़के औश्र गलियॉ निकलकर अक्षीय सड़कों के समानान्तर फैली होती है। यह प्रतिरुप अक्सर नये बसे गांवों में देखा जाता है। कुमायूँ हिमालय में नवविकसित नियोजित नगरों में सीमित मात्रा में यह प्रतिरुप दृष्टिगत होता है।

**बस्तियां (Settlements)**

मनुष्य बस्तियों का निर्माण अपने निवास के लिये करता है। निवास की मूलभूत इकाई घर है जो एक झोपड़ी अथवा भव्य महल हो सकता है। घरों के समूह से बस्ती बनती है। यह समूह 6 से 12 झोपड़ियों अथवा सैकड़ों घरों का हो सकता है। बड़ी बस्तियों को कस्बा या नगर कहते हैं। बड़े नगरों को महानगर या विराट नगर कहते हैं। अतः बस्ती से तात्पर्य उन मकानों अथवा झोपड़ियों के समूह से है। जिसका एक अभिन्यास प्लान होता है और इसमें आवासीय भवन तथा अन्य प्रयोजन के लिये बने भवन–पशुओं के लिये बाड़ा तथा औजारों एवं उपकरणों के लिये भण्डार होते हैं। ये सभी भवन एक सड़क द्वारा एक दूसरे से जुड़े होते हैं।

**बस्तियों के प्रकार (Types of Settlements)**

अध्ययन क्षेत्र में बस्तियां सामान्यतः दो प्रकार की पाई जाती हैं। 1. ग्रामीण तथा 2. नगरीय बस्तियां। ये बस्तियां व्यवसाय आकार तथा जनसंख्या की दृष्टि से एक–दूसरे से भिन्न होती है। इसमें ग्रामीण बस्तियां अधिक पायी गयी हैं जबकि नगरीय बस्तियां कुछ ही क्षेत्रों तथा पर्यटन स्थलों तथा बाजार के आस–पास कुछ ही भागों में पायी गयी हैं।

नगरीय केन्द्रों की वितरण प्रतिरुप एवं उनकी पारस्परिक दूरी का अध्ययन विश्लेषण न केवल उनकी रचना व्यवस्थाक को प्रकट करता है। अपितु क्षेत्र विशेष को भ्झू–वैन्यासिक संगठन के आधार को इंगित करता है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि नगरीय केन्द्र चतुर्दिक ऐसे सेवित क्षेत्र की उपज है जहॉ अपनी वस्तुओं एवं सेवाओं के आदान–प्रदान के माध्यम से इस प्रकार सम्बद्ध हो जाता है कि वह सम्पूर्ण क्षेत्र की आर्थिक, सामाजिक क्रिया के नियन्त्रित करने लगता है।

इस प्रकार नगरीय केन्द्र क्रिया कलाप की धुरी के साथ ही विकास कार्य की भी धुरी के रुप में कार्य करने लगते हैं। अतः इसके सुव्यवस्थित वितरण से ही क्षेत्र का सम्यक विकास सम्भव है। इसके अतिरिक्त इनके वितरण की प्रवृत्ति से एक ओर क्षेत्र में उनके गुम्फन्न की जानकारी होती है तो दूसरी ओर उस क्षेत्र के भावी विकास की योजना

निर्धारण में नगरीय केन्द्र की भूमिका की भी संकल्पना है वह यथार्थ रुप से उजागर होती है।

**आईसोटेन्जेन्ट मानचित्र –**

आईसोटेन्जेन्ट मानचित्र में यह रेखायें सबसे ऊपरी भाग को दर्शाती है। आईसोटेन्जेन्ट मानत्रित का सर्वप्रथम प्रतिपादन ए0एन0 स्ट्रालय ने (1969) में किया है। आईसोटेन्जेन्ट मानचित्र के लिये स्ट्रालय V/H = tan 0 ने सूत्र दिया है। टेन्जेन्ट मान को प्रतिशत में भी व्यक्त किया जाता है। आईसोजेन्जेन्ट मानचित्र इन्जीनियरों और योजनाकर्ताओं के लिये बहुत उपयोगी होता है।

**न्यून आईसोटेन्जेन्ट मान –**

न्यून आईसोटेन्जेन्ट श्रेणी अध्ययन क्षेत्र में प्रमुख उच्चावच्च स्वरुपों में बिखरी हुई प्रतीत होती है। इसका मान 0.0 से 0.1 सममान रेखाओं द्वारा अभिव्यक्त है। यह श्रेणी जलोढ़ और समप्राय मैदानों में अधिक पाये गये है।

**आईसोटेन्जेन्ट मानचित्र –**

मध्यम आईसोटेन्जेन्ट श्रेणी का मान 0.1 से 0.2 के सममान रेखाओं द्वारा प्रदर्शित किया गया है। यह श्रेणी नदी के नीचली घाटी में तथा पहाड़ और पठार में अधिक पाये गये हैं यह अध्ययन क्षेत्र में 22.5 वर्ग कि0मी0 या 3.98 प्रतिशत में है। मध्यम आईसोटेन्जेन्ट श्रेणी कुमायूँ हिमालय के उत्तरी–पूर्वी भाग में ऊपरी धौली नदी (3700 मीटर) उत्तरी–पश्चिमी भाग में नन्दरमा पहाड़ (3870 मीटर) दक्षिणी–पूर्वी भाग में मुन्स्यारी (2739 मीटर) और दक्षिण–पश्चिम भाग में निभाल पहाड़ (2647 मीटर) पीटिंग पहाड़ (2600 मीटर) में पाये गये है।

आईसोसाईन मानचित्र सैन्य विभाग में अधिक प्रयोग होता है क्योंकि आईसोसाईन मानचित्र दुर्गम स्थानों को, ऊँची–नीची भूमि तथा कम व अधिक ढाल की जानकारी सैन्य विभाग को देता है। अधिक मान होने के कारण ऊपर चढ़ाना आसान नहीं होता है। क्षेत्र दो कठिन मान यानि क्षेत्र के ऊपर व नीचे मिलता है। उसे ही आईसोसाईन रेखा कहते है। आईसोसाईन मानचित्र के द्वारा अध्ययन क्षेत्र में बहुत से कार्य जैसे भूमि उपयोग, ग्रामीण बस्ती, सड़क कार्यो आदि में बहुत सहायता मिलती है।

कुमायूँ मण्डल के नगरीय केन्द्रों के भू–वैन्यासिक वितरण के अध्ययनार्थ क्लार्क एवं इवान्स द्वारा प्रतिपादित निकटतम पड़ोसी विश्लेषण का प्रयोग निम्न तीन आधार पर किया गया है –

1. सम्पूर्ण मण्डल को एक क्षेत्र इकाई मानकर सम्पूर्ण नगरों के सन्दर्भ में।

2. कुमायूँ मण्डल के प्रत्येक जनपद को एक इकाई के रुप में मानकर तथा

3. जनगणना निदेशालय द्वारा प्रदत्त जनसंख्या के आधार पर नगरों के पदानुक्रम को अधार मानकर किया गया है।

जे0एल0 रिच (1916) ने फिन्स्टर वाल्डर के सूत्र में संसोधन किया है और बताया कि समोच्च रेखा के 900 कोण के सापेक्ष खींची गयी रेखाओं पर समोच्च रेखाओं के कटान बिन्दुओं की गणना की है। यह विधि भूपत्रक के एक निश्चित भाग की माप को दर्शाता है। स्ट्रालर ने औसत ढाल वक्र के लिये दो क्रमिक समोच्च रेखाओं के बीच का क्षेत्रफल प्लानीमीटर की सहायता से परिकलित किया है, ओपिसोमीटर की सहायता से उन समोच्च रेखाओं की लम्बाई की गणना की जाती है। तत्पश्चात् क्षेत्रफल को औसत चौड़ाई (Mean inter contour width) ज्ञात की जाती है। समोच्च रेखा मध्यान्तर को औसत चौड़ाई से विभाजित करने पर ढाल टैन्जेन्ट मान ज्ञात हो जाता है। पुनः गणितीय सारणी से वास्तविक ढाल का कोण ज्ञात कर लिया जाता है।

AW = A / (L1 + L2/2)

जहॉ AW = औसत चौड़ाई, A = क्षेत्रफल

L1 + L2 = दो क्रमिक समोच्च रेखाओं की लम्बाई

tan 0 = CI (In feet) / AW (In feet)

जहॉ CI = समोच्च रेखा मध्यान्तर

दुरी ने भी ढाल ऊँचाई वक्र विधि का प्रतिपादन किया है। इस अध्ययन में मोसले 1000 फीट के अन्तर पर से समोच्च रेखाओं के सहारे–सहारे ढाल कोणों की एक बड़ी अंशाकिता मापनी द्वारा निश्चित की है। उसके वर्णन के अनुसार एक समान ढाल उर्ध्वाधर अक्ष के समानान्तर सरल रेखा जैस प्रतीत होते है।

**ग्रामीण बस्तियां (Rural Settlements) :–**

अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण बस्तियां मकानों तथा गलियों का योग है। इन बस्तियों के चारो ओर कृषि भूमि होती है। खेत भी ग्राम की सीमा के अन्दर उसका अभिन्न अंग है। ग्रामीण बस्ती का सामान्य प्रकार गांव है। आर0एन0 सिंह (1973) में छोटानागपुर में 10 प्रतिदर्श ग्रामों में कुल आवासीय क्षेत्र के सन्दर्भ में वास्तविक निर्मित क्षेत्र के प्रतिशत के औसत के आधार पर संहतता सूचकांक परिकलित किया था। आर0सी0 तिवारी (1984), श्रीवास्तव (1987) आर0बी0 सिंह (1975) आदि ने ग्रामीण अधिवास पर अपने विचार तथा शोध पत्र प्रकाशित किये गये हैं। अध्ययन क्षेत्र में बसाव की सघनता एवं प्रकीर्णन के आधार पर ग्रामीण अधिवासों को मुख्यत निम्न चार प्रकारों में विभाजित किया जाता है –

1. सघन ग्रामीण अधिवास (Compact Rural Settlements)
2. अर्द्ध सघन ग्रामीण अधिवास (Semi-compact Rural Settlements)
3. पुरवा युक्त ग्रामीण अधिवास (Hamleted Rural Settlements) और
4. प्रकीर्ण ग्रामीण अधिवास (Dispresed Rural Settlements)

**ढाल निर्धारण एवं वर्गीकरण :–**

कार्ल पियर्सन विधि द्वारा औसत ढाल और उनका वास्तविक उच्चावच से सहसम्बन्ध ज्ञात किया गया है। जहॉ वास्तविक उच्चावच और औसत ढाल के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध सारणी क्रमांक 6.1 के आधार पर (r=+.56) पाया गया है। सारणी क्रमांक 6.1 जो औसत ढाल का वितरण एवं उनका वास्तविक उच्चावच से सहसम्बन्ध को दर्शाती है।

अतः कुमायूँ हिमालय का स्थलस्वरुप का भूदृश्य युवावस्था में दिखाई पड़ता है। मानचित्र क्रमांक 6.1 में कुमायूँ हिमालय के विभिन्न औसत ढाल को दर्शाया गया है। यह विभिन्न उच्चतम कटिबन्ध कम या अधिक एक दूसरे में समाहित होते हुये प्रतीत होती है। आर0एल0 सिंह (1967) ने औसत ढाल को पांच बांटा है जो इनकी व्याख्या द्वारा स्पष्ट हो जाती है। कुमायूँ हिमालय का औसत ढाल क्षेत्रीय वितरण निम्न है –

**1. समतल ढाल :–**

कुमार्यू हिमालय में समतल ढाल का क्षेत्रफल 279.00 वर्ग कि0मी0 या 49.4 प्रतिशत भाग में मिलता है। क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से सबसे बड़ा वर्ग है। प्रारम्भ में इनका विस्तार अधिक होता है। समरुपता के कारण इसे समढाल या स्थिर ढाल कहते है। इस ढाल पर शैलीय अवसाद का जमाव आसानी से हो जाता है।

यदि किसी पहाड़ी ढाल या सागर तटीय ढाल का अनुदैर्ध्य परिच्छेदिका का अवलोकन किया जाये तो स्पष्ट हो जायेगा कि शीर्ष से तली तक ढाल में समरुपता नही पायी जाती है। कहीं पर ढाल का आकार उत्तर तो कहीं पर तीव्र खड़ा, मन्द ढाल तथा अवतल दृष्टिगोचर होता है। ढाल के इन विशिष्ट अंगों को ढाल तथा अवतल दृष्टिगोचर होता है। ढाल के इन विशिष्ट अंगों को ढाल का तत्व कहते है। ऊँचाई शैल प्रकार, संरचना, वनस्पति आदि का प्रभाव महत्वपूर्ण होता है और यही कारण है कि ढालों के रुप में पर्याप्त भिन्नता होती है। अध्ययन क्षेत्र के ढालों के वर्तमान रुपों को देखा जाये तो प्रतीक होता है कि उनमें अधिकांश ढाल वर्तमान प्रक्रमों के प्रतिफल नहीं है वरन् प्राचीन ढालों के अवशेष मात्र है परन्तु जहॉ पर कोमल चट्टानें पाई जाती है और अपरदन अबाध गति से चल रहा हो वहॉ पर निश्चित रुप से ढालों का रुप वर्तमान प्रक्रमों का प्रत्यक्ष प्रतिफल है। विभिन्न प्रकार की जलवायु में विभिन्न प्रकार के ढाल होते है।

## REFERECES

1. Chib, Som, N., "Perspective on Tourism in India" (New Delhi Publication Division, Ministry of Information Broadcasting) (1999) p. 27

2. जय प्रकाश झा, बिना चिमनी एवं धुयें का उद्योग, पर्यटन योजना 31 मई 1993 पृ0 16

3. ब्रज किशोर मानव, भारत में पर्यटन की बढ़ती सम्भावनायें, योजना 16–31 मार्च, (1991) पृ0 27

4. Howard Mech, Hotel and Restaurant Guide India"96 Deptt. of Tourism, Government of India (1995) p. 8

5. अभय कुमार, मुद्रा स्मीति एवं भुगतान संतुलन की समस्या योजना 28 फरवरी 1993 पृ0 14

6. शिवेन्द्र नारायण सिंह, भारत का आर्थिक संकट और अवमूल्यन योजना 31 अक्टूबर (1991) पृ0 7